संदेश-पत्र

प्रिय कृष्ण कबीर,
प्रेम।

चेतना की सूक्ष्म वाणी प्रत्येक के पास है।
लेकिन, हम उसके प्रति व्यवस्थित रूप से बहरे बन गये हैं।
दूसरों के अनुगमन से प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को इतना दीन बना देता है कि वह स्वयं को ही सुनने, जानने और मानने में असमर्थ हो जाता है।
और फिर, स्वभावतः, एक ऐसे नकली और थोथे जीवन का जन्म होता है, जो कि मृत्यु से भी ज्यादा मृत होता है।
कंठ हमारा, और वाणी दूसरों की!
बुद्धि हमारी और विचार दूसरों के!
समाज व्यक्ति को सब भांति नष्ट करता है।
और, भीड़ प्रत्येक की आत्मा पर कब्जा करना चाहती है।
इसलिए, क्रमशः भीतर डूबो और भीड़ को स्वयं से बाहर करो।
शांति के क्षणों में स्वयं को सुनने का प्रयास करो।
समाज के कारागृहों के अतिक्रमण (Transcendence) से ही तुम्हारे कान तुम्हें वापस मिलेंगे।
और तुम्हारी आंखें भी।
और, तुम भी।
और, स्वयं को पा लेना प्रभु के मंदिर को पा लेना है।

– ओशो
प्रेम की झील में अनुग्रह के फूल

संपादकीय

संगीत परम सुरा है

संगीत क्या है? यह एक अभिव्यक्ति है अंतस की समस्वरता की। संभवतः आपको ये शब्द कुछ भारी लग रहे होंगे, लेकिन ये उपयुक्त हैं। अंतस अर्थात हमारे भीतर चित्त की दशा, समस्वरता अर्थात् स्वरों का संतुलन। जब हमारे चित्त में स्वरों का शोरगुल होता है तो वह सम अवस्था नहीं है, समस्वरता नहीं है, विषम अवस्था है। चित्त की ऐसी दशा से जो अभिव्यक्त होता है वह शोरगुल और विसंगीत होता है। सब प्रकार की कर्कशता, सब प्रकार का हुड़दंग, कोलाहल जो आज संगीत के नाम पर बिक रहा है, वह चित्त की विषम अवस्था का परिणाम है।

आदमी का मन अशांत है, उद्विग्न है, उत्तेजित है। भीतर विपरीत विरोधी स्वरों का घमासान युद्ध है। चित्त की ऐसी दशा में जीने वाले लोग भी संगीत निर्मित करने में संलग्न हैं, जिसे विसंगीत की संज्ञा दी जानी चाहिए। यह विसंगीत भारी मात्रा में बाज़ार में उपलब्ध है। यह बाजारू है और बड़े पैमाने पर बिक रहा है। अधिकांश लोग इसे ही खरीदते हैं। बहुत कम लोग हैं जो शुद्ध संगीत को सुनने की भावदशा में होते हैं। इसलिए वास्तविक संगीत बाज़ार में धीरे-धीरे दिखना बंद होता जा रहा है, अथवा कम से कम होता जा रहा है।

संगीत को सुनने, समझने, जीने और सृजन करने की एक पात्रता होती है। यह पात्रता आती है ध्यान से, और गहरा जाएं तो समाधि से। ध्यान के द्वारा हम चित्त में आ गए सब प्रकार के कोलाहल का रेचन करते हैं—ऐसे ही जैसे कोई किसान बीज बोने के पूर्व ज़मीन से झाड़-झंखाड़ उखाड़ कर भूमि को तैयार करता है। कंटीले झाड़-झंखाड़ से मुक्त चित्त की भावभूमि पर संगीत के सुवासित सुमन उपजते हैं।

यह सुमन शब्द प्यारा है। सु अर्थात सुंदर और मन अर्थात चित्त। सुंदर मन फूल जैसा कोमल, सुवासित एवं संगीतमय होता है। और यह तभी होता है जब हमारा मन सब प्रकार की विषमताओं के विष से मुक्त हो जाता है। मुक्ति की विधि है रेचन। ओशो-प्रणीत सक्रिय ध्यान के प्रथम चरण में हम श्वास-प्रश्वास द्वारा अपने प्राणों को प्राण-वायु से जीवंत व अनुप्राणित करते हैं और इसके दस मिनट बाद हम उन सब भावों को, जो हमारे मन पर कंटीली झाड़ियों जैसे फैल रहे हैं, उनको बाहर फेंक देते हैं शून्य में और भारमुक्त हो जाते हैं—रो कर, चीखकर, चिल्लाकर, हंस कर। चित्त का समस्त प्रलाप बाहर बहा देते हैं। मन हलका और निर्भार हो जाता है। फिर दस मिनट के बाद तीसरा चरण है अपने भीतर कुंडलिनी शक्ति को हू की चोट द्वारा जागृत करने का। जहां हमारे जीवन की जड़ें हैं, मूलाधार में, वहां से ऊर्जा को जाग्रत करना और अपने पूरे तन-मन को यह ऊर्जा उपलब्ध करा देना। चौथा चरण है परम स्थिरता का, मौन का। झाड़-झंखाड़ भरे विषम स्वरों के रेचन के बाद हम इस स्थिरता और मौन में भीतर का संगीत सुनने में समर्थ होते हैं। इस संगीत को सुनकर फूटता है भीतर नृत्य। संगीत व नृत्य जुड़े हैं। जहां संगीत है वहां नृत्य है। ऐसी भावदशा को प्राप्त व्यक्ति सच्चे संगीत का सर्जक होता है, उसके पहले नहीं। फिर इससे फर्क नहीं पड़ता कि वह अपने कंठ का उपयोग करता है या किसी वाद्य को बजाता है।

कई बार मैंने संगीत कार्यक्रमों को देखा है, जहां संगीत प्रस्तुत करने वाले बिना कुछ क्षणों को आंख बंद किये, बिना अपने भीतर के मौन से जुड़े संगीत गाना-बजाना शुरू कर देते हैं। तब वे शून्य के आकाश में उड़ान नहीं ले पाते। उन्हें तकनीक और व्याकरण का पता होता है, उसमें वे कुशल हो चुके होते हैं। इसलिए वे केवल मनोरंजन कर पाते हैं।

वास्तविक संगीत हृदय और आत्मा की गहराइयों से प्रस्फुटित होता है और वह श्रावकों को उसी भावदशा में ले जाता है। इस अंक में प्रकाशित ओशो-प्रवचनों के माध्यम से आप संगीत के इस आयाम को समझ सकेंगे तथा उनके ध्यान-प्रयोगों में उतर कर उसकी अनुभूति कर सकेंगे। ऐसे संगीत का ध्यान और संन्यास से गहरा संबंध है। ओशो कहते हैं : "संगीत ध्यान का सुगमतम उपाय है। जो संगीत में डूब सकते हैं उन्हें डूबने की और किसी दूसरी चीज़ को खोजने की कोई आवश्यकता नहीं है। संगीत अद्‌भुत मादकता है। संगीत परमसुरा है। उसमें डूबते-डूबते तुम्हारे विचार चले जाएंगे, तुम्हारा अहंकार चला जाएगा। संगीत को ध्यान समझो, क्योंकि संगीत का रस अनिवार्य है। इसलिए तो हमने परमात्मा को शब्द कहा, स्वर कहा, ओंकार कहा; क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति ध्वनि से निर्मित है। हमारे प्राणों के प्राण में ध्वनि गूंज रही है, अनाहत नाद गूंज रहा है, ओम् का नाद हो रहा है। इसलिए ऐसा व्यक्ति तो खोजना कठिन है, बिलकुल कठिन है जिसके भीतर कहीं न कहीं संगीत की संभावना न बनी हो। संगीत में रस हो तो सब छोड़ा जा सकता है, संगीत नहीं छोड़ा जा सकता। अगर संगीत ही तुम्हारा संन्यास बने तो बन जाने देना।"
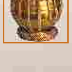
– स्वामी चैतन्य कीर्ति